Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 1, January-2019, ISSN 2230-7540

गाँधी जी एक महान् समाज सुधारक

Vijaypal Singh*

M.A. in Sociology, UGC NET, Income Tax Inspector, Department of Revenue, Ministry of Finance at Noida

शोध-आलेख सारः गाँधी जी एक महान् समाज सुधारक थे। उन्होंने भारतीय समाज में फैली अनेक बुराइयों यथा अस्पृश्यता, बाल-विवाह, विधवाओं की दुर्दशा, समुद्र यात्रा की मनाही, लड़कियों को शिक्षा की मनाही इत्यादि का घोर विरोध किया। उनका कहना था कि इन बुराइयों ने हिन्दू समाज को जर्जर बना दिया था। अनैतिकता व भ्रष्टाचार भारतीय समाज को अंदर ही अंदर खाए जा रहे थे। दूसरी ओर रूढ़िवादी व धर्म के ठेकेदार लोग अंध-विश्वासों में उलझे हुए थे। फलस्वरूप हिन्दुस्तान से बाहर एक सामान्य विदेशी भी इसे 'जादू-टोने वाले लोगों का देश' समझा करता था। इन विपरीत परिस्थितियों में एक कर्मयोगी व व्यावहारिक राजनीतिज्ञ की भाँति गाँधी जी ने सामाजिक व्यवस्था की बुराइयों की ओर पूरे देश का ध्यान खींच कर समाज को सुधारने का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य किया। उन्होंने सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक समस्याओं के बीच तालमेल बैठाकर उन्हें सही दिशा देने का प्रयत्न किया। उनके सामाजिक विचार उनके चिंतन को सामाजिक आधार प्रदान करते हैं।

मूल-शब्दः गाँधी दर्शन, अस्पृश्यता, साम्प्रदायिक एकता, नशाबंदी, महिला सशक्तिकरण, बुनियादी शिक्षा

---------------------------------X---------------------------------

भुमिका:

गाँधी जी कोरे दार्शनिक अथवा सैद्धान्तिक विचारक नहीं बल्कि एक कर्मयोगी व व्यावहारिक राजनीतिज्ञ थे। उनके चिंतन में अर्थशास्त्र, व्यक्तिवाद, समाजवाद व आदर्शवाद की झलक देखी जा सकती है। उनके चिंतन को समझने के लिए उनके सामाजिक विचारों का अध्ययन परमावश्यक है जो उनके दर्शन को सामाजिक आधार प्रदान करते हैं। गाँधी जी के सामाजिक विचारों के पल्लवित व पुष्पित होने में टालस्टॉय व रस्किन जैसे समकालीन विचारकों का प्रभाव पड़ा। टालस्टॉय द्वारा प्रतिपादित यह विचार कि 'प्रत्येक मनुष्य को अपने दैनिक भोजन के लिए शारीरिक श्रम करना चाहिए' ने गाँधी जी को अत्यन्त प्रभावित किया। रस्किन द्वारा प्रतिपादित धनलोलुपता से दूर रहने संबंधी विचार व रचनात्मक श्रम का भी उनके ऊपर अत्यंत प्रभाव पड़ा। रस्किन का विचार था कि 'श्रम मधु का उत्पादन करता है न कि मकड़े का जाल बुनता है।'1 ईसाईयों के पवित्र ग्रंथ बाइबिल ने भी उनके सामजिक विचारों को प्रभावित किया।

आधुनिक भारत में स्वर्ण वर्ग के सामाजिक व राजनीतिक सुधारकों में गाँधी जी ही केवल मात्र ऐसे व्यक्ति थे, जो अस्पृश्यता को न केवल हिंदू धर्म पर एक कलंक मानते थे, बल्कि इस ऊँच-नीच की दीवार को जड़ से समाप्त करना भी चाहते थे। उनकी दृष्टि में अस्प्रश्यता 'एक सौ सिर वाला दैत्य' था।2 उनका मानना था कि, "अस्पृश्यता हिंदू धर्म के सुंदर उपवन में उग आए अवांछनीय घास-पात की तरह है, जो इस तरह फैलती जा रही है कि इसके कारण इस उपवन के अंदर फूलों के मुरझाने का खतरा पैदा हो रहा है।" वास्तव में गाँधी जी अंत्यजों की दयनीय स्थिति के लिए स्वर्ण हिंदुओं को दोषी मानते थे। इसलिए उनका कहना था, 'साम्राज्यवादी सरकार ने जैसी डायरशाही हम पर चलाई, वैसी ही डायरशाही हिंदू धर्म के नाम पर स्वर्ण हिंदुओं ने भंगी जातियों पर चलाई है।'3 इसी कारण उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा, "मैं अस्पृश्यों का समर्थन इसलिए करता हूँ क्योंकि हमने उनके साथ घोर अन्याय किया है।"

गाँधी जी ने अस्पृश्यता को भारतीय समाज का सबसे बड़ा कोढ़ माना। उनका कहना था कि प्रत्येक भारतीय को इसे एक सामाजिक कलंक मानकर दूर करने का प्रयास करना चाहिए। इसके पीछे भी गाँधी जी आध्यात्मिक तत्त्व को मूल मानते हैं। गीता व वेदान्त में बतलाया गया है कि सभी जीवों व मानवों में समान आत्मा का अंश है। अतः सभी को समान दर्जा दिये बिना न तो अहिंसा पूर्णरूपेण जीवन में अवतरित होगी और न सामाजिक प्रगति ही संभव हो सकेगी। सभी मानव एक ही ईश्वर की संतान हैं, इसलिए उनका अस्पृश्यता का सिद्धान्त

www.ignited.in

इस बात पर बल देता है कि 'मानव-मानव के बीच भेद को मिटा देना चाहिए।'4

गाँधी जी प्राचीन भारतीय जीवन पद्धति में वर्ण व्यवस्था को एक आदर्श स्थिति मानते थे। उनका कहना था अस्पृश्यता निवारण का आशय ऊँच-नीच का भेद न हो, वैवाहिक या सामाजिक संबंधों पर प्रतिबंध न हो, जाति प्रथा समाप्त हो और तब हमारा समाज प्राचीन वर्णव्यवस्था का स्थान ग्रहण करेगा। गाँधी जी कहते हैं कि वास्तवकि रूप में वर्णों का आज अस्तित्व नहीं रह गया है। वर्ण का उत्तम रूप केवल हिंदुओं के लिए नहीं, बल्कि सम्पूर्ण मानवता के लिए है। वह उध्र्वागामी स्थिति में मनुष्य के लिए स्वाभाविक है। वे वर्ण नियम को परिभाषित करते हुए कहते हैं, वर्ण-नियम का अर्थ है कि प्रत्येक मनुष्य को अपने पूर्वजों का पैतृक धर्म-कत्र्तव्य की तरह अपनाना चाहिए, यदि वह धंधा मूलभूत नीति से असंगत न हो। हालांकि वर्ण का निर्धारण जन्म से होता है, परन्तु उसकी रक्षा कत्र्तव्य पालन से होती है। ब्राह्मण माता-पिता का पुत्र ब्राह्मण कहलायेगा किंतु यदि व्यस्क हो जाने पर उसके जीवन में ब्राह्मण के गुणों की अभिव्यक्ति नहीं होगी तो उसे ब्राह्मण नहीं कहा जा सकता। दूसरी तरफ वह व्यक्ति जो जन्म से ब्राह्मण नहीं है, किंतु अपने आचरण में ब्राह्मण के गुणों की अभिव्यक्ति करता है, ब्राह्मण माना जायेगा, यद्यपि वह स्वयं ब्राह्मण होना अस्वीकार करेगा। गाँधी जी का कहना है कि इस नियम का पालन स्वाभाविक रीति से होना चाहिए तथा उसमें शर्म या प्रतिष्ठा का विचार नहीं आना चाहिए। इस नियम का यह भी अर्थ है कि धंधों व पेशों में कोई ऊँचा-नीचा नहीं, सब बराबर हैं और संपत्ति का उपयोग समाज के हित के लिए संन्यासी की भाँति करना चाहिए। अतः वर्ण नियम में अस्पृश्यता जैसे कोढ़ की कोई गुंजाइश नहीं है।5

गाँधी जी ने अस्पृश्यता को एक पाप मानते हुए उसे प्रजातंत्र की भावना के विरुद्ध माना। उनका मानना है कि यह मानव श्रम की महत्ता के उल्लंघन के साथ-साथ अनेक आर्थिक समस्याओं को भी जन्म देता है। अछूत समाज के कमजोर व गरीब अंग हैं तथा वे गंदी बस्तियों में रहते हैं और अनेकों प्रकार की बीमारियों से घिरे हुए हैं। उनके लिए रोजगार के साधन भी सीमित हैं।6 अस्पृश्यता पर उन्होंने कहा, "अस्पृश्यता का निवारण हिंदुओं के लिए एक पश्चाताप है। अछूतों के शुद्धिकरण की नहीं, बल्कि ऊँची कहलाने वाली जातियों के शुद्धिकरण की आवश्यकता है। ऐसी कोई बुराई नहीं है जो केवल अछूतों के लिए विशेषतौर से हो। हमारे अहंकार ने हमको अपनी बुराइयों के प्रति अंधा बना दिया है और हम दलित भाइयों, जिनको हमने कुचला है और दासता में रखा है, की बुराइयों को बढ़ा-चढ़ा कर कहते हैं। ईश्वर की कृपा और उसके दर्शन किसी जाति या राष्ट्र का एकाधिकार नहीं है। वे सबको जो ईश्वर की भक्ति करते हैं, समान रूप से प्राप्य हैं। जो धर्म और राष्ट्र अन्याय, असत्य और अहिंसा में विश्वास रखता है, वह इस धरती से मिट जाएगा।" उन्होंने एक अन्य स्थान पर कहा है, "अस्पृश्यता के गंभीर रूप ने सदा मुझको कष्ट पहुँचाया है, क्योंकि मैं स्वयं को पक्का हिंदू समझता हूँ। मुझे किसी भी हिंदु-शास्त्र में अस्पृश्यता के पक्ष में कोई भी तर्क नहीं मिला है। यदि हिंदू धर्म इसमें विश्वास करता है तो मुझे स्वयं हिंदू धर्म को छोड़ देने में कोई झिझक नहीं होगी।"

गाँधी जी अहिंसक विधि से अस्पृश्यता का भारतीय समाज से उन्मूलन चाहते थे। वे भारतीय समाज से सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक विषमता की खाई को समाप्त करके समानता लाना चाहते थे। उनका मानना था कि सामाजिक उत्थान का कार्य निचले स्तर से आरम्भ होना चाहिए। गाँधी जी के अनुसार अस्पृश्य जातियों का मंदिर-प्रवेश सवर्णों के आत्मपरिवर्तन तथा दलितों के सामाजिक, सांस्कृतिक उत्थान का कारगर उपाय था। उनका मानना था कि मंदिर-प्रवेश एक आध्यात्मिक वस्तु है, जिससे सभी उत्थान संभव हो सकते हैं।7 वे स्वर्ण व दलितों के बीच सामाजिक, सांस्कृतिक समानता लाने के उद्देश्य से मंदिर-प्रवेश की बात करते थे। उन्होंने अस्पृश्यता को एक भयंकर कोढ़ व हिंदू धर्म पर काला धब्बा बतलाया और इसके निवारण के लिए उपवास तक रखे। उन्होंने अछूतों को 'हरिजन' नाम दिया व हरिजनोद्वार को अपने सामाजिक सुधार कार्यक्रम का सर्वप्रमुख विषय बनाया।

गाँधी जी के चिंतन में साम्प्रदायिक एकता व सद्भावना का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। उनके अनुसार, 'हिंदु-मुस्लिम एकता का अर्थ केवल हिंदुओं व मुसलमानों के बीच एकता नहीं है बल्कि उन सब लोगों के बीच एकता है जो भारत को अपना घर समझते हैं, उनका सम्प्रदाय चाहे जो भी हो।8 गाँधी जी ने हिंदू धर्म के साथ-साथ इस्लाम धर्म का भी गहन अध्ययन किया था। उन्होंने लिखा है कि वे एक ऐसे धर्म के अनुयायी हैं जो सब धर्मों को सत्य मानता है। अतः वे दावा कर सकते हैं कि वे एक ईसाई, एक बौद्ध, एक मुसलमान व एक पारसी भी हैं। वे साम्प्रदायिक एकता को केवल ऐतिहासिक जरूरत ही नहीं बल्कि एक सामाजिक जरूरत भी मानते थे। उन्होंने इस एकता को प्राप्त करने का तरीका अहिंसा व इसका लक्ष्य सर्वोदय बताया। साम्प्रदायिक एकता के संबंध में गाँधी जी का दृष्टिकोण धार्मिक और आध्यात्मिक था। उनका मानना था कि सभी धर्मों में सत्य का अंश विद्यमान है। सभी धर्म ईश्वर को प्राप्त करने के विभिन्न मार्ग हैं, सभी धर्मों के नैतिक व आध्यात्मिक सिद्धान्त समान हैं। अतः कोई धर्म अन्य किसी धर्म से श्रेष्ठ नहीं है।9 प्रत्येक व्यक्ति को अन्य धर्मों का आदर

करना चाहिए। साम्प्रदायिक समस्या का समाधान तभी सम्भव है जब प्रत्येक व्यक्ति अपने धर्म की सर्वोत्कृष्ट बातों को मानने के साथ-साथ अन्य धर्मों तथा उनके मानने वालों को उचित सम्मान दे।

गाँधी जी किसी एक जाति या धर्म में नहीं बल्कि 'सर्वधर्म संभाव' में विश्वास रखते थे। उनका मत है कि 'मानवता' का संरक्षण सभी धर्मों एवं मजहबों का बुनियादी सिद्धान्त है। सभी धर्म यह उपदेश देते हैं कि संसार के सभी इंसान भाई-भाई व समान हैं। सभी धर्मों ने क्षमा को अपने बुनियादी सिद्धान्तों में सबसे बड़ा दर्जा दिया है। सभी धर्म बुराई का बदला भलाई से देने का मार्ग सुझाते हैं। गाँधी जी ने जहाँ एक तरफ हिंदू धर्म ग्रंथों-वेदों, उपनिषदों, पुराणों व गीता इत्यादि का अध्ययन किया वहाँ दूसरी तरफ कुरान व पैगंबर साहब की जीवनी का भी अध्ययन किया। इतना ही नहीं बल्कि उन्होंने बाइबिल, गुरू ग्रंथ साहिब, बौद्ध धर्म, जैन धर्म व पारसी धर्म ग्रंथों का भी अध्ययन किया। इन सबके अध्ययन से उभरे सार-तत्व ने उन्हें यह आभास कराया कि सभी धर्मों में बुनियादी एकता विद्यमान है।10 उन्होंने लिखा, "विभिन्न धर्मों की सहकारिता तभी स्थापित हो सकती है, जबकि विभिन्न धर्मों के अनुयायी एक-दूसरे धर्म के प्रति क्रियात्मक रूप से सम्मान का भाव प्रकट करें।" उन्होंने अपने आपको एक हिंदु और साथ ही साथ एक मुसलमान और ईसाई भी बतलाया। उनकी प्रार्थना में बाइबिल व कुरान के अंश भी विद्यमान होते थे। उन्होंने 'खिलाफत' के प्रश्न को असहयोग आंदोलन के कार्यक्रम में शामिल किया। हिंदू-मुस्लिम एकता बनाए रखने के लिए उन्होंने धर्म के आधार पर भारत के विभाजन का सदैव विरोध किया।11 15 अगस्त, 1947 को बड़े उल्लास के साथ भारत जिस समय अपना प्रथम स्वतंत्रता दिवस मना रहा था, उदासी में डूबे गाँधी जी बंगाल में पैदल घूम-घूम कर साम्प्रदायिक दंगों के समय लोगों को सांत्वना दे रहे थे। उन्होंने देश के विभाजन को एक 'आध्यात्मिक दुर्घटना' की संज्ञा देते हुए आजादी के समारोह में भाग लेने से इंकार कर दिया।12 उनका कहना था कि, "हमारी स्वतंत्रता तभी पूर्ण होगी जब इसमें जाति, पद या धर्म के भेदभाव के बिना राजकुमार को भी उतनी ही स्वतंत्रता मिलेगी - जितनी किसान को, भूपति को उतनी-जितनी भूमिहीन कृषक को, हिंदुओं को उतनी-जितनी मुसलमानों को, ईसाइयों को उतनी-जितनी जैनियों को, यहूदियों को उतनी-जितनी सिक्खों को।' गाँधी जी ने अपना समग्र जीवन साम्प्रदायिक एकता में लगा दिया। उन्होंने धर्म के द्वारा राजनीति का शुद्धिकरण कर हिंदू-मुस्लिम के बीच पनप रही खाई को कम करने का भरसक प्रयत्न किया। परन्तु इन सबके बावजूद भी भारतवर्ष का धर्म के नाम पर विभाजन हुआ। इसके परिणामस्वरूप आज भी भारत में धार्मिक कट्टरता व साम्प्रदायिकता विद्यमान है तथा समाज धर्म के आधार पर बँटा हुआ है। हिंदू-मुस्लिम एकता को उन्होंने भारतीय भूमि पर सैद्धांतिक व व्यावहारिक दोनों रूपों में अत्यावश्यक समझा था और अपने जीवन के आखिरी क्षण तक वे इसी कार्य में लगे रहे।

गाँधी जी नशाबंदी के पूर्ण समर्थक थे। उनका मानना था कि शराब पीना और नशीली दवाओं का सेवन करना एक भयंकर बुराई है। उनकी दृष्टि में शराबी व चोर एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं, क्योंकि जहाँ चोर केवल धन-सम्पत्ति चुराता है, वहाँ शराबी न केवल अपनी सम्पत्ति को, बल्कि अपनी तथा अपने पड़ोसी की इज्जत को भी जोखिम में डालता है। चूँकि मदिरापान से शरीर व आत्मा दोनों की क्षति होती है। इसलिए यह व्यक्ति व समाज दोनों के लिए हानिकारक है। उनका मानना था कि मद्य व अन्य मादक पदार्थों का प्रयोग व्यक्तियों का चारित्रिक पतन करता है। लोग नशे की लत के चलते घर की आमदनी को बर्बाद करते हैं, फलतः घर की खुशियाँ एवं सुख-शांति भी बर्बाद हो जाती है।13

गाँधी जी का कहना था कि मद्य व मादक पदार्थों के लोगों द्वारा सेवन से राष्ट्र का पतन होकर वह पूरी तरह बर्बाद हो सकता है। सन् 1929 में उन्होंने इस विषय पर कहा, "जिस राष्ट्र के लोग शराब पीने के आदी हों, बर्बादी के सिवा उसका कोई भविष्य नहीं है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि इस बुरी आदत ने साम्राज्यों को खत्म कर दिया है। .... रोम का पतन इसी बुराई ने किया था। इसलिए यदि आप सम्मान सुख से रहना चाहते हैं तो समय रहते इस आदत को छोड़ना होगा।" शराब की इन्हीं बुराइयों की वजह से उन्होंने सम्पूर्ण भारत में नशाबंदी का समर्थन किया। उन्होंने कहा, "यदि मुझे एक घंटे के लिए भी भारत का तानाशाह बना दिया जाए तो सबसे पहला काम जो मैं करूँगा वह होगा शराब की सभी दुकानों को बिना मुआवजे के बंद करना।" गाँधी जी ने नैतिक, आर्थिक एवं बौद्धिक कारणों से शराब का विरोध किया। उनका कहना था कि जो पैसा बच्चों की शिक्षा व उनके स्वास्थ्य पर खर्च होना चाहिए, वह शराब में नष्ट हो जाता है। जब एक बार गाँधी जी से किसी ने कहा कि शराबबंदी के लिए अभी देश इंतजार कर सकता है तो वे नाराज होकर बोले, "किसी शराबी की औरत से जाकर इंतजार करने के लिए कहो, फिर देखना वह तुम्हारी क्या गत बनाती है। मैं तो हजारों शराबियों की औरत बनकर देख चुका हूँ और इसलिए एक मिनट का भी इंतजार करने का धीरज अब मुझमें नहीं रहा।" शराब से सरकार को प्राप्त होने वाली आय के बारे में उन्होंने कहा,"स्मरण रहे कि शराब से प्राप्त आय निकृष्ट प्रकार का टैक्स है। टैक्स तभी ठीक हो

www.ignited.in

सकता है जब इसके बदले में कर-दाता को दस गुणा अधिक सेवा प्राप्त हो। एक्साइज लोगों को अपने नैतिक, मानसिक व शारीरिक गिरावट के लिए कर अदा करने पर मजबूर करती है। यह उन पर जो इसे सबसे कम सहन करने योग्य हैं, भारी बोझ के समान है।" उन्होंने अपने आदर्श समाज की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए यह स्पष्ट कर दिया था कि उनके आदर्श समाज में मादक पदार्थों का न तो उत्पादन होगा न ही बिक्री। परन्तु गाँधी जी की अकाल मृत्यु के कारण उनका यह स्वप्न पूरा नहीं हो सका। आज भी देश में मद्य व मादक पदार्थों का सेवन जोर-शोर से होता है। इन नशीले पदार्थों के सेवन ने उनका चारित्रिक पतन कर दिया है। इसी चारित्रिक दोष के कारण आज तीन साल की बच्ची के साथ अप्राकृतिक यौन संबंध व दादी की उम्र की औरत के साथ बलात्कार की घटनाएँ बढ़ रही हैं।

भारतीय जीवन शैली व चिंतन में गाँधी जी के महत्त्वपूर्ण योगदानों में से महिला अधिकारों के विषय में उनके विचार एवं योगदान एक हैं। वे समाज में प्रचलित इस सामान्य धारणा से सहमत नहीं थे कि महिलाएँ आदमियों की तुलना में कमजोर हैं, इसलिए समाज में उन्हें नीचा दर्जा देना चाहिए। उनके अनुसार स्त्री न तो पुरुष के भोगने की वस्तु है और न ही पुरुष की प्रतियोगी। गाँधी जी के चिंतन के अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है कि वे एक नारीवादी विचारक थे, जिन्होंने पितृसत्तात्मक मूल्यों के आधार पर लैंगिक समानता के मुद्दों का निर्माण किया और उन्हें संबोधित भी किया।14 महिलाओं की व्यक्तिगत शक्ति की बजाय उनकी नैतिक व आध्यात्मिक शक्ति में गाँधी जी की अपार आस्था थी। वे महिलाओं को एक ऐसी नैतिक शक्ति के रूप में देखना चाहते थे जिनके पास अपार नारीवादी साहस हो। गाँधी जी के व्यक्तिगत व सामाजिक अनुभवों ने उन्हें यह अहसास दिलाया कि पुरुष ने हमेशा महिला को अपनी कठपुतली के रूप में इस्तेमाल किया है। निःसंदेह इसके लिए पुरुष ही जिम्मेदार है, अतः महिलाओं को यह निश्चित करना होगा कि उन्हें जीवन में क्या चाहिए और उनके साथ कैसा व्यवहार होना चाहिए?15

गाँधी जी भारतीय समाज में नारी की दुर्दशा से बेहद दुखी थे। उन्हें यह दलील बिल्कुल मान्य नहीं थी कि स्त्रियाँ बुद्धि व योग्यता में पुरुषों से किसी प्रकार कम हैं। वे इतिहास को साक्षी मानकर कहते हैं कि प्राचीन भारत में जीवन के अनेक क्षेत्रों में पुरुषों से स्त्रियाँ आगे थी और सामाजिक जीवन में उन्होंने अपने को ऊपर उठाया। स्त्री आत्मत्याग की साक्षात् मूर्ति है तथा स्त्री व पुरुष का समान दर्जा है, एक के अस्तित्व का दूसरे के बिना कोई औचित्य नहीं है। गाँधी जी के शब्दों में, "महिला और पुरुष एक-दूसरे का पूरक होने के नाते अपनी तरह की नायाब जोड़ी बनाते हैं। जोड़ी में हरेक एक-दूसरे की इस कदर मदद करता है कि एक के बगैर दूसरे के अस्तित्व को ही स्वीकार नहीं किया जा सकता। इन तथ्यों का आवश्यक परिणाम यह निकलता है कि दोनों में से किसी की भी स्थिति को कमजोर करने वाली कोई भी चीज आखिरकार दोनों को ही समान रूप से नष्ट करेगी।16 गाँधी जी का कहना था कि समाज में महिलाओं को पुरुषों के समान दर्जा देना चाहिए क्योंकि वे बुद्धि बल में पुरुषों से किसी भी तरह कम नहीं होती और समाज में महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारियाँ संभालती हैं। उनके अनुसार, "महिलाएँ समान मानसिक शक्तियाँ रखते हुए पुरुषों की सहभागिनी बनती हैं। अतः उन्हें मानव समाज के जीवन में बराबर का अधिकार होना चाहिए और उन्हें भी पुरुषों के समान आजादी का उपयोग करने देना होगा।"

गाँधी जी का कहना था कि महिलाएँ अपने घर के अंदर एक निरस्त व पुरुषों के साथ लगी वस्तु की तरह जीती हैं और उनका ज्यादातर समय अपने पतियों की खुशियों को पूरा करने में ही बीत जाता है। वे महिलाओं की इस घरेलू दासता को अशिष्टता का प्रतीक कहते थे।17 उन्होंने महिलाओं से पुरजोर शब्दों में अपील की कि वे पुरुषों के बराबर खड़ी हों। उन्हें पुरुषों के इंद्रिय सुख को पूरा करने की मशीन बन कर उनके हाथों में नहीं खेलना चाहिए बल्कि अपना विकास करके सम्पूर्ण मानवता के विकास मंे हिस्सा बँटाना चाहिए। उनके शब्दों में, "पुरुष को महिला जन्म देती है, वह उसी के माँस हड्डियों से अपनी माँस हड्डियाँ पाता है। इसलिए तुम अपने पैरों पर खड़ी होकर आगे बढ़ो और अपने संदेश विश्व को दो।" महिलाओं को संबोधित करते हुए सन् 1931 में गाँधी जी ने 'यंग इंडिया' मंे लिखा था, "भारत का भविष्य तुम्हारे पैरों पर लोट रहा है क्योंकि भावी पीढ़ी का विकास आप ही करेंगी। भारत की इन संतानों को तुम्हीं ईश्वर भीरू और तेजस्वी पुरुष एवं महिलाएँ बना सकती हो या उन्हें इतना कमजोर बना सकती हो कि वे मुसीबतों का सामना न कर सकें। वे विदेशी शासन में रहने के ऐसे आदी हो जाएँ कि भविष्य में उससे मुक्त होना ही न चाहें।"

बाल विवाह की प्रथा को गाँधी जी भारतीय महिलाओं के लिए बहुत बड़ा अभिशाप व हिंदू समाज पर एक कलंक समझते थे। इसी से संबंधित था बाल विधवाओं की स्थिति का मुद्दा। जब शारदा अधिनियम में शादी की उम्र 14 साल तक बढ़ाने का प्रस्ताव रखा गया तो गाँधी जी को लगा कि यह सीमा 16 या 18 साल तक बढ़ा देनी चाहिए। जो माँ बाप अपनी बेटी की शादी कम उम्र में करने की गलती कर चुके हैं उनके लिए गाँधी जी का आग्रह था कि अगर उनकी बेटी बाल विधवा हो जाए तो उसकी दूसरी शादी करा देनी चाहिए।18 उनका कहना था, "स्वेच्छा से विधवा रहना हिंदू धर्म की अमूल्य देन है। पर जबरन एक शाप है। मुझे लगता है कि उन्हें जबरदस्ती रोके न

रखा जाए और हिंदू लोकमत का डर न हो तो बहुत सी विधवाएँ निःसंकोच दोबारा विवाह कर लें।" वे बेमेल विवाह के विरुद्ध थे। उदाहरणस्वरूप किसी वृद्ध का किसी युवा स्त्री के साथ विवाह। गाँधी जी ने स्त्रियों की सामाजिक व आर्थिक स्वतंत्रता का पोषण ही नहीं किया बल्कि उनकी राजनीतिक स्वतंत्रता की भी वकालत की। वे स्त्री मताधिकार के प्रबल समर्थक थे। उनका कहना था स्त्रियों को मताधिकार के साथ-साथ राजनीति में भी पुरुषों के समान भाग लेना चाहिए। वे उन कानूनों को रद्द करने के पक्ष में थे जो स्त्रियों को बराबर का दर्जा देने के विरोधी थे। उन्होंने ने महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए जो प्रयास किए उनको नकारा नहीं जा सकता। उन्होंने अपने रचनात्मक कार्यक्रमों के द्वारा महिलाओं में जागृति पैदा कर उन्हें सभी क्षेत्रों में आगे बढ़ने का अवसर प्रदान किया।

गाँधी जी देश के सामान्य व राजनीतिक उत्थान के लिए शिक्षा का नवसंस्कार अनिवार्य मानते थे। इसलिए उन्होंने अपने कार्यकर्ताओं के साथ देश के कई भागों में शिक्षा के क्षेत्र में अनेक प्रयोग किये। इसे हम बुनियादी शिक्षा के नाम से जानते हैं। उनका कहना था कि शिक्षा का सही उद्देश्य व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक इत्यादि गुणों का विकास करना है। व्यक्ति का सर्वांगीण विकास तभी संभव है जब शिक्षा में ज्ञान के साथ कर्म और विचार के साथ आचार का समन्वय हो। शिक्षा की सबसे बुनियादी जवाबदेही माँ-बाप पर रहती है जो सूक्ष्म व गंभीर रूप से बालक के विचार, भावना व आचरण को प्रभावित करते हैं। माँ-बाप का प्रभाव तो बालक पर उसी समय से पड़ने लगता है जिस समय से वह माँ के पेट में रहता है। परन्तु, जब तक माँ-बाप स्वयं अपना आदर्श ऊँचा नहीं रखेंगे तब तक बच्चे पर उसका प्रभाव नहीं पड़ सकता।19 डिवी की तरह गाँधी जी भी 'कार्य के द्वारा शिक्षण' पर बहुत अधिक जोर देते हैं। उन्होंने हरिजन में लिखा है, "मस्तिष्क की सच्ची शिक्षा के लिए शारीरिक अवयवों का समुचित उपयोग आवश्यक है। शारीरिक शक्ति एवं कर्मेन्द्रियों के बुद्धिपूर्वक उपयोग से सुंदर से सुंदर और शीघ्र से शीघ्र मानसिक विकास संभव हो सकता है।" उनकी बुनियादी शिक्षा का यही आधार है। इस पद्धति के अनुसार किसी प्रकार के हस्तकौशल या कारीगरी के माध्यम से ही शिक्षा दी जाती है। इसमें सभी साहित्यिक व वैज्ञानिक शिक्षण किसी न किसी कारीगरी पर केन्द्रित रहते हैं। इसे शिक्षण की दृष्टि से 'समवाय-पद्धति' कहा जा सकता है।20 किसी हस्तकर्म के साथ शिक्षण को जोड़ देने से विद्यार्थी शरीर से समर्थ, बुद्धि से सजग व आत्मविश्वास से परिपूर्ण होता है। विद्यार्थी हस्त-कर्म से कुछ आय भी अर्जित करता है, जिससे शिक्षा-शुल्क में भी आंशिक स्वालम्बन हो पाता है। इसमें शिक्षा के ऊपर होने वाले खर्च का बोझ सरकार पर थोड़ा कम होगा, जिससे शिक्षा का अधिक से अधिक विस्तार भी संभव हो सकेगा। गाँधी जी ने शिक्षा की इस पद्धति की खोज विशेषकर गाँवों को दृष्टि में रखकर की थी। वे चाहते थे कि गाँव-समाज के लड़के किसी न किसी जीविकोपयोगी उद्योग को अधिक कुशलतापूर्वक सीख जायें। उनका मानना था कि इस प्रकार गाँव का पुनरुद्धार हो सकेगा व गाँवों से शहरों की ओर प्रवासन की प्रवृत्ति भी रुक जायेगी।

गाँधी जी मातृभाषा के द्वारा शिक्षा देने के समर्थक थे। उनका कहना था कि भारत में अंग्रेजी शासकों द्वारा चलाई गई शिक्षा-प्रणाली भारतीय युवकों को देश की संस्कृति से दूर ले जा रही है और इसने उनके दृष्टिकोण को विदेशी बना दिया है। वे अपने आपको जनता से एक अलग वर्ग समझने लग गए हैं। उनमें से 'बाबू' बनने की बू आ रही है तथा वे शारीरिक श्रम को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। इसलिए गाँधी जी ने अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली के विकल्प के रूप में अपनी 'बेसिक शिक्षा' की योजना प्रस्तुत की। गाँधी जी राष्ट्रीय शिक्षा के विकास पर बल देते थे जिससे राष्ट्रीय संस्कृति के अंदर जो सुंदर से सुंदर तत्त्व हैं उनके प्रति तथा राष्ट्रीय संभावनाओं के प्रति बच्चों में प्रेम व विश्वास पैदा हो सके। इसके बिना कोई भी व्यक्ति या राष्ट्र ऊपर नहीं उठ सकता परन्तु इसके साथ-साथ शिक्षा का उद्देश्य यह भी होना चाहिये कि व्यक्ति व राष्ट्र अपनी संभावनाओं व शक्तियों का विकास इस प्रकार करे कि संपूर्ण मानव की एकता व अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव पैदा हो सके। बुनियादी शिक्षा के द्वारा गाँधी जी व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाने के साथ-साथ नैतिक मूल्यों की भी शिक्षा देते हैं जिससे कि व्यक्ति सही आचरण कर सके।21 इससे लोग स्वावलम्बी बनेंगे व बेकारी जैसी भयंकर बीमारी से भी छुटकारा पाया जा सकेगा।

निष्कर्ष:

इस समस्त अध्ययन के पश्चात् यह स्पष्ट हो जाता है कि गाँधी जी के सामाजिक विचारों ने उनके चिंतन को सामाजिक आधार प्रदान किया। उन्होंने केवल राजनीतिक क्षेत्र में ही गहरे परिवर्तन नहीं किये बल्कि जीवन की एक व्यापक धारणा के कारण सामाजिक, औद्योगिक व आर्थिक इत्यादि सभी क्षेत्रों में क्रांति की। उन्होंने स्त्रियों को जगाया, सामाजिक कुरीतियों का नाश किया तथा अछूतों व उत्पीड़ितों को आश्वासन दिया। उन्होंने किसानों की ओर निजत्व के भाव से देखा, अनेक गृह-उद्योगों का उद्धार किया और अनेक देशी कलाओं को पुनर्जीवन प्रदान किया। आचार्य कृपलानी ने गाँधी जी के बारे में लिखा है कि, "राजनीति का सत्य, अहिंसा व साधनों की पवित्रता द्वारा आध्यात्मीकरण करके, अन्याय और

www.ignited.in

निरंकुशता का सत्याग्रह द्वारा सामना कर तथा अपने रचनात्मक कार्यक्रमों द्वारा गाँधी जी ने सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक जीवन का योग एवं समन्वय करने का प्रयत्न किया तथा प्रभावकारी लोकतंत्र की स्थापना कर, उन्होंने न्याय और समानता पर आधारित समाज की नींव डालकर विश्व शांति के लिए मार्ग प्रशस्त किया।"

संदर्भ:

1. मनोज सिन्हा (संपादित) गाँधी अध्ययन, ओरियंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली, 2011, पृ. 165
2. वही, पृ. 133
3. अनिल दत्त मिश्र, गाँधी एक अध्ययन, पीयर्सन पब्लिशर्स, दिल्ली, 2012, पृ. 228
4. एम.के. मिश्रा, कमल दाधीच, गाँधी दर्शन, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2011, पृ. 94
5. वही, पृ. 94-95
6. एस.आर बक्शी, गाँधी एण्ड हिज टैक्निक्स ऑफ़ सत्याग्रह, स्टीरलिंग पब्लिशर्स प्रा.लि., न्यू दिल्ली, 1987, पृ. 71-77
7. अनिल दत्त मिश्र, पूर्वोक्त, पृ. 237
8. एम.के. गाँधी, दा वे टू कम्युनल हारमोनी, यू.आर.राव, कम्पाइल्ड एंड एडिटेड, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 1983, पृ. 8
9. अजय कुमार, इस्लाम अली (संपादित) भारतीय राजनीतिक चिंतन: संकल्पनाएँ एवं विचारक, पियर्सन पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2012, पृ. 227
10. मनोज सिन्हा, पूर्वोक्त, पृ. 113
11. एस.आर बक्शी, पूर्वोक्त, पृ. 55-57
12. अनिल दत्त मिश्र, पूर्वोक्त, पृ. 214-215
13. एम.के. मिश्रा, कमल दाधीच, पूर्वोक्त, पृ. 83
14. मनोज सिन्हा, पूर्वोक्त, पृ. 120-121
15. वही
16. अनिल दत्त मिश्र, पूर्वोक्त, पृ. 219
17. मनोज सिन्हा, पूर्वोक्त, पृ. 122
18. वही, पृ. 123
19. धीरेन्द्र मोहन दत्त (अनुवादक रामजी सिंह) महात्मा गाँधी का दर्शन, बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1973, पृ. 90-91
20. वही, पृ. 91
21. वीरेन्द्र कुमार सक्सेना, गाँधी और अहिंसा शिक्षा, रितु पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2015, पृ. 10

Corresponding Author

Vijaypal Singh*

M.A. in Sociology, UGC NET, Income Tax Inspector, Department of Revenue, Ministry of Finance at Noida

singhvijaypal89@gmail.com